UP Board Solutions for Class 10 Sanskrit Chapter 9 जीवनं निहितं वने (गद्य – भारती)

परिचय

भारतवर्ष के लोगों द्वारा वनों का सदा से आदर किया जाता रहा है। प्राचीन काल में ऋषि-मुनि वनों में ही आश्रम बनाकर रहते थे। वैदिक धर्म में जो चार आश्रम माने गये हैं उनमें तीसरा आश्रम, अर्थात् वानप्रस्थाश्रम; वनों से ही सम्बन्धित है। वैदिक वाङ्मय के एक भाग 'आरण्यक्' ग्रन्थ हैं। अरण्य में रचित होने के कारण ही इन्हें यह नाम दिया गया है। वनों का ऐतिहासिक, आध्यात्मिक महत्त्व होने के साथ-साथ भौतिक महत्त्व भी है। वनों से हमें लकड़ी, ओषधियाँ तथा अन्य बहुत-सी उपयोगी वस्तुएँ प्राप्त होती हैं। वनों की अन्धाधुन्ध कटाई से आज वातावरण दूषित हो गया है, वर्षा कम हो रही है, गरमी बढ़ रही है और भूमिगत जल का स्तर भी कम होता जा रहा है। अतः जीवन को सुचारु रूप से चलाने, पर्यावरण को सुरक्षित करने तथा वन्य-जीवों की सुरक्षा के लिए यह आवश्यक है कि वनों की अनियन्त्रित कटाई पर रोक लगायी जाए तथा जो वृक्ष काटे जा चुके हैं, उनके स्थान पर नये पौधे लगाये जाएँ। प्रस्तुत पाठ में उपर्युक्त सभी तथ्यों पर प्रकाश डालकर जीवन में वन के महत्त्व को समझाया गया है।

पाठ-सारांश [2006,07,08, 10, 11, 12, 14]

वनों का महत्त्व 'वन' शब्द सुनने से ही मन में कुछ भय और आदर उत्पन्न होता है। भय इसलिए कि वन में सिंह-व्याघ्र आदि हिंसक पशु और अजगर आदि सर्प रहते हैं। वन में इतनी निर्जनता होती है कि विपत्ति में पड़े हुए मानव को करुण-क्रन्दन वन में ही विलीन हो जाता है। आदर इसलिए कि हमारे भौतिक और सांस्कृतिक विकास में वनों का बड़ा योगदान है। ब्रह्म विद्या के विवेचक, उपनिषद् आदि ग्रन्थों की रचना वनों में ही हुई। तपोवनों में दशलक्षणात्मक मानव धर्म और पुरुषार्थ चतुष्टयों का आविर्भाव हुआ है। इसलिए प्राचीन काल में लोगों ने वन के बिना जीवन की कल्पना ही नहीं की। वन मनुष्य को प्रत्यक्ष रूप में जो कुछ प्रदान करते हैं उससे कहीं अधिक वे परोक्ष रूप में देते हैं। इसलिए प्राचीन लोग वृक्षों को पुत्रवत् । पालते थे और वन्य जन्तुओं की रक्षा करते थे।

वनों की रक्षा के प्रयास लोभी मनुष्य अपने थोड़े-से लाभ के लिए वनों को इस प्रकार लगातार काटता जा रहा है कि एकाएक उसके स्वयं के जीवन के लिए भी संकट पैदा हो गया है; क्योंकि जीवन अन्नमय है। अन्न कृषि से उत्पन्न होता है और कृषि हेतु अनुकूल वातावरण बनाने के लिए वनों की अत्यधिक आवश्यकता है। यही कारण है कि आजकल संसार में सभी राष्ट्र वनों की रक्षा करने में लगे हुए हैं। भारत में भी सरकार के द्वारा लोगों को वन-संरक्षण के प्रति जागरूक करने के लिए आन्दोलन चलाये जा रहे हैं और वन-महोत्सव आयोजित किये जा रहे हैं। इनके माध्यम से लोगों को अधिकाधिक वृक्ष लगाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

वनों के प्रकार वनों की रचना वनस्पति और पक्षियों सहित जन्तुओं से होती है। मनुष्य को दोनों से ही पर्याप्त लाभ हैं। वृक्षों से फल, फूल, ईंधन और मकान बनाने की लकड़ी प्राप्त होती है। औद्योगिक उत्पादन के लिए उपयोगी जैतून का तेल और दूसरे उपयोगी द्रव-पदार्थ भी वनस्पतियों से ही उपलब्ध होते हैं। आजकल प्रचलित वस्त्रों के निर्माण में काम आने वाले तन्तुओं को बनाने में एक विशिष्ट प्रकार के वृक्ष की लकड़ी का प्रयोग होता है। वृक्षों की शाखाओं से सन्दूक आदि गृहोपयोगी सामग्री का निर्माण होता है। रस्सी और चटाइयाँ भी वनस्पति से ही निर्मित

होती हैं। इस प्रकार वनस्पतियों को बिना विचारे काटना महापाप है। यदि किसी विशेष परिस्थिति में वृक्ष काटने ही पड़े तो वृक्षों की हानि की पूर्ति के लिए अतिरिक्त वृक्षों को लगाया जाना चाहिए। हरे वृक्षों के काटने पर रोक लगायी जानी चाहिए। वन वायु-शुद्धि, भू-क्षरण निरोध और बादलों को बरसने में सहायता करके मानव का उपकार करते हैं।

पशु-पक्षियों की रक्षा वृक्षों के काटने के समान ही मनुष्यों ने जंगली जानवरों का भी विनाश किया है। खाल, दाँत, पंख आदि के लालच से मनुष्य ने इतने अधिक पशु-पक्षियों का वध कर दिया है कि उनकी न जाने कितनी जाति-प्रजातियाँ ही नष्ट हो गयीं। वह सिंह-व्याघ्र आदि हिंसक पशुओं को ही नहीं, वरन् हिरन जैसे भोले-भाले, सुन्दर पशुओं को भी मारने लगा है। हिंसक पशु भी प्रकृति का सन्तुलन कर मनुष्य को महान् उपकार करते हैं। पक्षी कृषि को हानि पहुँचाने वाले कीड़ों को, तीतर दीमकों को, सिंह आदि भी अन्य पशुओं को मारकर उनको अधिक बढ़ने से रोकते हैं। अतः मनुष्य को वन्य जन्तुओं और पशु-पक्षियों की रक्षा करनी चाहिए।

भारत में पक्षियों की साढ़े बारह सौ प्रजातियाँ पायी जाती हैं। वे ऋतु-परिवर्तन, प्रजनन और भोजन-प्राप्ति के कारणों से अन्यत्र जाते हैं और वापस यहाँ आते हैं। शीतकाल में साइबेरिया से हजारों पक्षी भरतपुर के पास घाना पक्षी-विहार में आते हैं। पक्षियों की मित्रता, दाम्पत्य-प्रेम, काम-व्यापार, भोजन की विधियाँ, घोंसले बनाना और विपत्ति में अपनी रक्षा करना, ये सब मनुष्य के लिए अध्ययन के विषय हैं।

विश्नोई जाति द्वारा वृक्षों का संरक्षण हमारे देश में सलीम अली ने पक्षी-विज्ञान के सम्बन्ध में अनेक पुस्तकें लिखी हैं। हरियाणा और राजस्थान में विश्नोई सम्प्रदाय के लोग प्राण देकर. भी पशु-पक्षियों और हरे वृक्षों की रक्षा करते हैं। वृक्षों को न काटने देने और उनका संरक्षण-संवर्द्धन करने में इस जाति के लोगों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। जोधपुर नरेश की आज्ञा से वृक्षों को काटे जाने पर ३०० विश्नोई स्त्री-पुरुषों ने अपने प्राण त्याग दिये थे। हमें भी वृक्षों के संरक्षण-संवर्द्धन हेतु इनके जैसा ही उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए।

वनों से ग्राह्य लाभ वनों से जो लाभ प्राप्त करने योग्य हैं, उन्हें अवश्य प्राप्त करना चाहिए। योजना बनाकर ही पुराने वृक्षों को काटना चाहिए और उनसे दुगुने नये वृक्ष पहले ही लगा देने चाहिए। घरों के आँगनों में, खेतों की सीमाओं पर, पर्वतों की तलहटियों में, खेल के मैदान में चारों ओर तथा मार्गों के दोनों ओर जितना भी स्थान मिले, वृक्ष लगाने चाहिए। यह कार्य योजनाबद्ध रूप में किया जाना चाहिए। जन्म-मृत्यु और विवाह के अवसरों पर वृक्ष लगाये जाने चाहिए। यदि योजना बनाकर उत्साहपूर्वक वृक्ष लगाये जाएँ और उनका पोषण किया जाए तो अभी भी क्षतिपूर्ति हो सकती है। वन-संरक्षण के लिए हमें-‘वनेन जीवनं

रक्षेत्, जीवनेन वनं पुनः– आदर्श का पालन करना चाहिए।

गद्यांशों का ससन्दर्भ अनुवाद

(1)

वनमिति शब्दः श्रुतमात्र एव कमपि दरमादरं वा मनसि कुरुते। तत्र सिंहव्याघ्रादयो भयानका हिंस्रकाः पशवोऽजगरादयो विशालाश्च सरीसृपाः वसन्ति, निर्जनता तु तादृशी यत्तच्छायायामापदि निपतितस्य जनस्य आर्तः स्वरो मानवकर्णे प्रविशेदिति घुणाक्षरीयैव सम्भावना, प्रायशस्तु स वनगहन एव विलीयेतेति नियतिः। एतां स्थितिमेव विबोध्य संस्कृते मनीषिभिररण्यरोदनन्याय उद्भावितः। सत्यमेव स्थितिमेतामनुस्मृत्यापि भिया वपुष्येकपदे एव रोमाञ्चो जायते। परन्त्वस्माकं न केवलं भौतिके प्रत्युत सांस्कृतिकेऽपि विकासे वनानां सुमहान् दायो यत आरण्यकोपनिषदादयः पराविद्याविवेचका ग्रन्थाः वनेष्वेवाविर्भूताः। वनस्थेषु तपोवनेष्वेव दशलक्षणात्मको मानवधर्मश्चतुष्टयात्मकं जीवनोद्देश्यं च उत्क्रान्तमितीतिहासः सुतरां प्रमाणयति तस्मात्

https://www.evidyarthi.in/

वनेष्वस्माकमादरोऽपि भवति। प्राक्तनैस्तु वनं विना जीवनमेव न परिकल्पितम्। संस्कृतकवीनां वनदेवताकल्पना वानप्रस्थाश्रमे च वननिवासविधानं तदेव सङ्केतयति। एतदपि बोध्यं यत् प्रत्यक्षतो वनानि मनुजजात्यै यावद् ददति परोक्षतस्तु ततोऽप्यधिकम्, तस्मादेव कारणात् प्राञ्चः स्वपुत्रकानिव पादपान् पालयन्ति स्म जन्तूञ्च रक्षन्ति स्म, अजर्यं तेषां तैः सङ्गतमासीत्।

शब्दार्थ श्रुतमात्र एव = सुनते ही दरम् = भय। आदरम् = आदर। हिंस्रकाः = हिंसा करने वाले। सरीसृपाः = सर्प आदि रेंगने वाले जन्तु। तादृशी = उसी प्रकार की। यत्तच्छायायामापदि (यत् + तत् + छायायाम् + आपदि) = कि उसकी छाया में आपत्ति में। घुणाक्षरीयः = घुणाक्षर न्याय से, संयोग से, अकस्मात्। विलीयेत = नष्ट हो जाये। नियतिः = भाग्य। विबोध्य = जानकर। अरण्यरोदनन्यायः = वन में रुदन करने की कहावता उद्भावितः = कल्पना की है। वपुष्येकपदे (वपुषि + एकपदे) = शरीर में एक साथ)। दायः = योगदान आरण्यकोपनिषदादयः = आरण्यक उपनिषद् आदि। पराविद्या = आध्यात्मिक विद्या। वनेष्वेवाविर्भूताः (वनेषु + एव + आविर्भूताः) = वन में ही प्रकट हुए हैं। वनस्थेषु = वनों में स्थिता तपोवनेष्वेव = तपोवनों में ही। उत्क्रान्तम् = प्रकट हुआ। प्राक्तनैः = प्राचीन विद्वानों के द्वारा| वननिवासविधानम् = वन में निवास करने का नियम्। बोध्यम् = जानना चाहिए। मनुजजात्यै = मनुष्य जाति के लिए यावद् ददति = जितना देते हैं। परोक्षतस्तु = अप्रत्यक्ष रूप से तो। प्राञ्चः = प्राचीन पुरुष। अजय्रम् = अटूट, कम न होने वाला। सङ्गतमासीत् = सम्बन्ध था।

सन्दर्भ प्रस्तुत गद्यावतरण हमारी पाठ्य-पुस्तक 'संस्कृत' के गद्य-खण्ड 'गद्य-भारती' में संगृहीत 'जीवनं निहितं वने' शीर्षक पाठ से उद्धृत है।

[संकेत इस पाठ के शेष सभी गद्यांशों में यही सन्दर्भ प्रयुक्त होगा। **]**

प्रसंग इस गद्यावतरण में वनों की भयंकरता तथा आध्यात्मिक महत्व के बारे में बताया गया है।

अनुवाद 'वन' यह शब्द केवल सुननेमात्र से ही मन में कुछ डर और आदर (उत्पन्न) करता है। वहाँ सिंह, व्याघ्र आदि भयानक हिंसक पशु, अजगर आदि विशाल सर्प (रेंगने वाले विषैले जीव) रहते हैं। वहाँ निर्जनता वैसी है कि उसकी छाया में आपत्ति में पड़े मनुष्य का करुण-क्रन्दन मानव के कान में प्रवेश कर जाये, यह घुणाक्षर न्याय; अर्थात् संयोग से ही सम्भव है, प्रायः वह (आर्त स्वर) वन की गहनता में स्वाभाविक रूप से विलीन हो जाता है। इस स्थिति में जान करके संस्कृत में विद्वानों ने 'अरण्यरोदन न्याय की कल्पना की है। सचमुच में ही, इस स्थिति को याद करके भी डर से शरीर में एकदम ही रोमांच हो जाता है, परन्तु हमारे केवल भौतिक विकास में ही नहीं, प्रत्युत सांस्कृतिक विकास में भी वनों का बहुत बड़ा योगदान है; क्योंकि आरण्यके, उपनिषद् आदि अध्यात्म विद्या का विवेचन करने वाले ग्रन्थ वनों में ही रचे गये। वनों में स्थित तपोवन में ही दस लक्षणों वाला मानव धर्म, पुरुषार्थ चतुष्टयों से युक्त जीवन का उद्देश्य प्रकट हुआ, ऐसा (यह) इतिहास अच्छी तरह प्रमाणित करता है। इस कारण वनों के विषय में हमारा आदर भी होता है। प्राचीन विद्वानों ने वन के बिना जीवन की कल्पना ही नहीं की। संस्कृत कवियों की वन-देवता की कल्पना करना और वानप्रस्थ आश्रम में वन में रहने का नियम उसी (बात) का संकेत करता है। यह भी समझ लेना चाहिए कि प्रत्यक्ष रूप से वन मनुष्य जाति को जितना देते हैं, परोक्ष रूप से उससे भी अधिक देते हैं। इसी कारण से प्राचीन लोग वृक्षों का अपने पुत्र के समान पालन करते थे और वन के प्राणियों की रक्षा करते थे। उनके साथ उनका अटूट सम्बन्ध था।

(2)

किन्तु हन्त! निरन्तरविवर्धितसङ्ख्यो विवृद्धलोभो मानवस्तात्कालिकाल्पलाभहेतोर्विचारमूढ़तया वनानि तथा अचीकृन्तत् चङकृन्तति च यत्तस्य निजजीवनस्यैव नैकधा भीरुपस्थिता, जानात्येव लोको यज्जीवनमन्नमयम्, अन्नं च कृष्योत्पाद्यम्, कृषिविकासार्थं समुचितं वातावरणं घटयितुं प्राकृतिकं सामञ्जस्यं च रक्षितुं वनानामद्यत्वे

यादृश्यावश्यकता न तादृशी क्वापि पुराऽन्वभूयत्। यतोऽहर्निशं विद्यमानानां वनानां तावानेवांशोऽवशिष्टः यावान् भारतभूभागस्य प्रतिशतं केवलमेकादशमंशमावृणोति, तत्राप्युत्कृष्टवनानि तु प्रतिशतं चतुरंशात्मकान्येव। भद्रमिदं यदधुना विश्वस्य सर्वेष्वपि राष्ट्रेषु वनानां रक्षार्थं प्रयासाः क्रियन्ते। भारतेऽपि सर्वकारेण तदर्थं जनं प्रबोधयितुमेकमान्दोलनमेव चालितं यदधीनं समये-समये नैकत्र वनमहोत्सवा आयोज्यन्ते, व्यक्तयः सार्वजनीनाः संस्थाश्चापि वृक्षान् रोपयितुं प्रोत्साह्यन्ते।

शब्दार्थ निरन्तरविवर्धितसङ्ख्यः = लगातार बढ़ती हुई संख्या वाला। मानवस्तात्कालिकालाभहेतोर्विचारमूढतया = मनुष्य ने तुरन्त होने वाले थोड़े लाभ के कारण विचारहीनता से। अचीकृन्तत् = काट डाला। कृन्तति = काट रहा है। नैकधा (न + एकधा) = अनेक प्रकार से। भीः = भय। कृष्योत्पाद्यम् = खेती (कृषि) के कारण उत्पन्न होने वाला। घटयितुम् = जुटाने (बनाने के लिए। सामञ्जस्यम् = सन्तुलन, तालमेल। पुरा = पहले। अन्वभूयत् = अनुभव की गयी। अहर्निशम् = रात-दिन। तावानेवांशोऽवशिष्टः (तावान् + एव + अंशः + अवशिष्टः) = उतना ही भाग बचा है। आवृणोति = ढकता है। तत्रापि = उनमें भी। चतुरंशात्मकान्येव = चार भाग ही है। सर्वकारेण = सरकार ने। प्रबोधयितुम् = जाग्रत करने के लिए। नैकत्र = अनेक स्थानों पर। आयोज्यन्ते = आयोजित किये जाते हैं। प्रोत्साह्यन्ते = प्रोत्साहित किये जाते हैं।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में अल्प लाभ के लिए स्वार्थी मनुष्य के द्वारा वनों के काटे जाने और सरकार द्वारा वृक्षारोपण को प्रोत्साहित किये जाने का वर्णन किया गया है।

अनुवाद किन्तु खेद है, निरन्तर बढ़ी हुई संख्या (जनसंख्या) वाले और बढ़े हुए लोभ वाले मानव ने तात्कालिक थोड़े-से लाभ के लिए विचारशून्य होने से वनों को इस प्रकार काट डाला और अभी भी काट रहा है कि उसके अपने जीवन को ही अनेक प्रकार से भय उत्पन्न हो गया है। संसार जानता ही है कि जीवन अन्नमय है और अन्न कृषि से उत्पन्न होता है। कृषि के विकास के लिए समुचित वातावरण जुटाने के लिए और प्रकृति के सन्तुलन की रक्षा (बनाये रखने) के लिए आज के समय में वनों की जैसी आवश्यकता है, वैसी पहले कहीं भी अनुभव नहीं की गयी; क्योंकि रात-दिन विद्यमान वनों का उतना ही अंश बचा है, जितना भारत की भूमि के केवल 11 प्रतिशत भाग को ही ढक पाता है। उसमें भी अच्छे वन तो चौथाई प्रतिशत ही हैं। यह अच्छा है कि अब विश्व के सभी राष्ट्रों में वनों की रक्षा के लिए प्रयास किये जा रहे हैं। भारत में भी सरकार ने उसके लिए लोगों को जागरूक करने के लिए एक आन्दोलन ही चला रखा है, जिसके अन्तर्गत समय-समय पर अनेक जगह वन-महोत्सव आयोजित किये जाते हैं, व्यक्तियों और सार्वजनिक संस्थाओं को भी वृक्ष लगाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

(3)

वनसङ्कटकास्तावद् द्विविधा वनस्पतयः सविहगा जन्तवश्च। उभयस्मादपि मानवस्य लाभस्तद् द्वयमपि च यथायोग्यं रक्षणीयम्। वृक्षेभ्यो न केवलं फलानि, पुष्पाणि, इन्धनार्माणि भवनयोग्यानि च काष्ठानि, अपितु भैषज्यसमुचितानि नानाप्रकाराणि वल्कलमूलपत्रादीनि वस्तून्यपि लभ्यन्ते, नानाविधौद्योगिकोत्पादनसमुचितानि जतूनि, तैलानि तदितरद्रवपदार्थाश्चापि प्राप्यन्ते। स्वास्थ्यकरं मधुरं सुस्वादु औषधभोजनं मधु अपि वनपतिभ्यः एवोपलभ्यते। कर्गदस्येव नाइलोन इति प्रसिद्धस्य उत्तमपटनिर्मितिप्रयुक्तस्य सूत्रस्योत्पादनेऽपि वृक्षविशेषाणां काष्ठमुपादानं जायते। तेषां शाखानामुपयोगो मञ्जूषापेटिकादिनिर्माण क्रियते। रज्जवः कटाश्चापि वानस्पतिकमुत्पादनमिति कस्याविदितम्? एवंविधस्य वनस्पतिसमूहस्य अविचारितकर्तनं न केवलं कृतघ्नता, अपितु ब्रह्महत्येव महापातकमपि। सम्प्रति यावद् वनानां या हानिः कृता तत्पूर्त्यर्थं हरितवृक्षाणां कर्तनावरोधो नूतनानां प्रतिदिनमधिकाधिकारोपश्च सर्वेषामपि राष्ट्रियं कर्तव्यम्। वायुशुद्धिः, भूक्षरणनिरोधः पर्जन्यसाहाय्यं च वनानां मानवस्य जीवनप्रदः परोक्ष उपकारः।

https://www.evidyarthi.in/

वनसङ्कटकास्तावद .... पदार्थाश्चापि प्राप्यन्ते।

शब्दार्थ वनसङ्कटकास्तावत् = वनों का संघटन करने वाली। सविहगाः = पक्षियों सहिता ईन्धनार्माणि = ईंधन के योग्य। भैषज्यसमुचितानि = दवाई के योग्य। जतूनि = लाख। औषधभोजनम् = औषध और भोजन। कर्गदस्येव = कागज़ के समान ही। उत्तमपटनिर्मितिप्रयुक्तस्य = उत्तम कपड़ों के बनाने में प्रयुक्त होने वाले को। उपादानम् = प्रमुख कारण। मञ्जूषा = सन्दूका रज्जवः = रस्सियाँ। कटाः = चटाइयाँ। वानस्पतिक-मुत्पादनमिति = वनस्पतियों से होने वाला उत्पादन है, ऐसा। अविचारितकर्तनम् = बिना विचारे काटना। महापातकमपि = महापाप भी। कर्त्तनावरोधः = काटने पर रोका आरोपः = लगाना| पर्जन्यसाहाय्यम् = मेघों की सहायता।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में वनों में उत्पन्न होने वाली वनस्पतियों के प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष लाभों को बताया गया है।

अनुवाद वनों के संघटक (रचना करने वाले तत्त्व) दो प्रकार के होते हैं-वनस्पतियाँ और पक्षियोंसहित जीव-जन्तु। दोनों से ही मनुष्य का लाभ है। इसलिए उन दोनों की यथायोग्य रक्षा करनी चाहिए। वृक्षों से केवल फल, फूल, ईंधन के योग्य और मकान बनाने के योग्य लकड़ियाँ ही प्राप्त नहीं होती हैं, अपितु ओषधियों के योग्य नाना प्रकार के वल्कल (छाल), जड़े, पत्ते आदि. वस्तुएँ भी प्राप्त होती हैं। नाना प्रकार के औद्योगिक उत्पादन के योग्य लाख, तेल और द्रव पदार्थ भी प्राप्त होते हैं। स्वास्थ्यकारी, मीठा, स्वादिष्ट, औषध में खाने योग्य शहद भी वनस्पतियों से ही प्राप्त होता है। कागज के समान नाइलोन नाम से प्रसिद्ध, उत्तम कपड़ों के बनाने के काम में आने वाले धागे के उत्पादन में भी विशेष वृक्षों की लकड़ी सामग्री (कच्चे माल) का काम करती है। उनकी शाखाओं का उपयोग सन्दूक, पेटी आदि के बनाने में किया जाता है। रस्सियाँ और चटाइयाँ भी वनस्पतियों से ही बनती हैं, यह किसे अज्ञात है? इस प्रकार की वनस्पतियों के समूह का बिना विचारे काटना केवल कृतघ्नता ही नहीं है, अपितु ब्रह्म-हत्या के समान महान् पाप भी है। अब तक वनों की जो हानि की गयी, उसकी पूर्ति के लिए हरे वृक्षों के काटने पर रोक और प्रतिदिन अधिक-से अधिक नये (वृक्षों को) लगाना सभी का राष्ट्रीय कर्तव्य है। वायु की शुद्धता, पृथ्वी के कटाव को रोकना और मेघों की सहायता करना वनों का मनुष्यों को जीवन प्रदान करने वाला परोक्ष (अप्रत्यक्ष) उपकार है।

(4)

यथा वृक्षाणामुच्छेदस्तथैव मानवेन वन्यजन्तूनामप्यमानवीयो विनाश आचरितः।। चर्मदन्त-पक्षादिलोभेन मांसलौल्येन च पशुपक्षिणां तावान् वधः कृतो यदनेकास्तेषां प्रजातयो भूतलाद् विलुप्ताः, नैकाश्च लुप्तप्रायाः। सिंहव्याघ्रादीनां तु दूर एवास्तां कथा, हरिणादिमुग्धपशून् तित्तिरादिकान् उपयोगिनः पक्षिणोऽपि निघ्नन्नासौ विरमति। हिंस्रकाः जन्तवोऽपि प्राकृतिक सन्तुलनं रक्षन्ति मनुष्यस्य चोपकारका एव भवन्ति। पक्षिणः कृषिहानिकरान् कीटान् भक्षयन्ति यथा तित्तिरः सितपिपीलिकाः तथैव सिंहादयाः पशून् हत्वा परिसीमयन्ति। एवं स्वत एवं प्रकृतिः स्वयं सन्तुलनं साधयति। एवमद्यानुभूयते यत् मनुष्यस्य तदितरेषां प्राणिनां च मध्ये सौहार्दं स्थापनीयम्। तत्र मनुष्य एव प्रथमं प्रबोधनीयः शिक्षणीयश्च यतः स निरर्थकं मनोरञ्जनायापि मृगयां क्रीडन् हिंसा करोति।

यथा वृक्षाणामुच्छेदः .... एव भवन्ति **[2008]**

शब्दार्थ वृक्षाणां = वृक्षों को। उच्छेदः = काटना| पक्ष = पंख। लौल्येन = लालच से। दूर एव आस्तां कथा = दूर ही रहे कहानी। तित्तिरादिकान् = तीतर आदि को। निघ्नन् = मारते हुए। विरमति = रुकता है। सितपिपीलिकाः = दीमक परिसीमयन्ति = सीमित कर देते हैं। एवमद्यानुभूयते = इस प्रकार आज अनुभव किया जा रहा है। सौहार्दम् = मित्रता। मृगयां क्रीडन् = शिकार खेलता हुआ।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में मानव द्वारा वन्य पशु-पक्षियों के विनाश करने का वर्णन किया गया है।

अनुवाद मानव ने जिस प्रकार वृक्षों को काटा, उसी प्रकार जंगली जानवरों का भी अमानवीय (नृशंस) विनाश किया। खाल, दाँत, पंख आदि के लालच से और मांस के लालच से पशु-पक्षियों का इतना वध किया है। कि उनकी अनेक जातियाँ पृथ्वी से ही लुप्त हो गयीं और अनेक समाप्त होने वाली (लुप्तप्राय) हैं। सिंह, बाघ आदि की बात तो दूर है, हिरन आदि भोले-भाले पशुओं, तीतर आदि उपयोगी पक्षियों को भी मारते हुए (वह) नहीं रुक रहा है। हिंसक जानवर भी प्रकृति के सन्तुलन की रक्षा करते हैं और मनुष्य का उपकार करने वाले ही। होते हैं। पक्षी खेती को हानि पहुँचाने वाले कीड़ों को खाते हैं। जैसे तीतर सफेद चीटियों (दीमकों) को, उसी प्रकार सिंह आदि (भी अन्य) पशुओं को मारकर (उनकी वृद्धि को) सीमित कर देते हैं। इस प्रकार प्रकृति स्वयं ही अपना सन्तुलन कर लेती है। इस प्रकार आज अनुभव किया जा रहा है कि मनुष्य और उससे भिन्न प्राणियों के बीच में मित्रता स्थापित होनी चाहिए। उनमें पहले मनुष्य को ही समझाना चाहिए और शिक्षा देनी चाहिए, क्योंकि वह व्यर्थ ही मनोरंजन के लिए भी शिकार खेलता हुआ हिंसा करता है।

(5)

अस्माकं विशाले भारतवर्षे सार्धद्वादशशतजातीयाः पक्षिणः प्राप्यन्ते। तेषु बहवः ऋतुपरिवर्तनकारणात् प्रजननहेतोर्भोजनस्य दुष्प्राप्यत्वात् काले-काले पत्र व्रजन्ति। एवमेव देशान्तरादपि बहवः पक्षिणोऽत्रागत्य प्रवासं कुर्वन्ति। रूसप्रदेशस्य साइबेरियाप्रान्तात् सहस्रशो विहगाः शीतकाले भारतस्य भरतपुरनिकटस्थे घानापक्षिविहारम् आगच्छन्ति। पक्षिणां मैत्रीभावः, दाम्पत्यं, मिथो व्यापाराः, भोजनविधयः, नीड़निर्माणं विपदि आचरणं सर्वमपि प्रेक्षं प्रेक्षमध्येयं भवति। तन्न केवलं मनोरञ्जकमपितु शिक्षाप्रदमात्मानन्दजनकं चापि भवति।

शब्दार्थ सार्धद्वादशशतजातीयाः = साढ़े बारह सौ जातियों वाले। प्राप्यन्ते = प्राप्त होते हैं। परत्र = दूसरे स्थान पर। व्रजन्ति = चले जाते हैं। देशान्तरादपि = दूसरे देश से भी। प्रवासं = निवास। मिथो व्यापाराः = काम-व्यापार नीडनिर्माणम् = घोंसला बनाना। विपदि आचरणम् = विपत्ति में आचरण| प्रेक्षं-प्रेक्षं = देख-देखकर।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में भारत में विद्यमान पक्षी-प्रजातियों और दूसरे देशों से आने वाले पक्षियों के बारे में बताया गया है।

अनुवाद हमारे विशाल भारत देश में साढ़े बारह सौ जाति के पक्षी प्राप्त होते हैं। उनमें बहुत-से ऋतु-परिवर्तन के कारण, प्रजनन के लिए, भोजन कठिनाई से प्राप्त होने के कारण समय-समय पर दूसरी जगह चले जाते हैं। इसी प्रकार दूसरे देशों से भी बहुत-से पक्षी यहाँ आकर निवास करते हैं। रूस देश के 'साइबेरिया' प्रान्त से ठण्ड के समय में हजारों पक्षी भारत के 'भरतपुर' नामक स्थान के समीप घाना पक्षीविहार में आते हैं। पक्षियों की मित्रता, दाम्पत्य-प्रेम, आपसी व्यवहार (काम-व्यापार), भोजन के तरीके, घोंसले बनाना, विपत्ति के समय उनका व्यवहार सभी के लिए बार-बार दर्शनीय और अध्ययन के योग्य होता है। वह केवल मनोरंजन करने वाला ही नहीं, अपितु शिक्षाप्रद और आत्मा से आनन्द उत्पन्न करने वाला भी होता है।

(6)

अस्माकं देशे सलीमअलीनामा महान् विहगानुवीक्षको जातो येन पक्षिविज्ञानविषये बहूनि पुस्तकानि लिखितानि सन्ति। हरियाणाप्रदेशे राजस्थाने च निवसन्तो विश्नोईसम्प्रदायस्य पुरुषा वनानां पक्षिणां च रक्षणे स्वप्राणानपि तृणाय मन्यन्ते। न ते हरितवृक्षान् छिन्दन्ति नापि चान्यान् छेत्तुं सहन्ते। वन्यपशूनामाखेटोऽपि तेषां वसतिषु नितरां प्रतिषिद्धः। जोधपुरनरेशस्य प्रासादनिर्माणार्थं काष्ठहेतोः केजरीवृक्षाणां कर्तनाज्ञाविरुद्धम् एकैकशः शतत्रयसङ्ख्यकैर्विश्नोईस्त्रीपुरुषैः विच्छेदिष्यमाणवृक्षानालिङ्गदिभः, प्रथममस्माकं वपुश्छेद्यं पश्चाद् वृक्षाः इत्येवं जल्पभिः स्वप्राणा दत्ता इति तु जगति विश्रुतं नामाङ्कनपुरस्सरं तत्राङ्कितं च।

https://www.evidyarthi.in/

शब्दार्थ तृणाय मन्यन्ते = तिनके के समान मानते हैं। आखेटः = शिकार।
वसतिषु = बस्तियों में। नितरां = पूर्ण रूप से। प्रतिषिद्धः = निषिद्ध है।
प्रासादनिर्माणार्थं = महल बनाने के लिए। कर्तनाज्ञाविरुद्धम् = काटने की आज्ञा
के विरोध में। एकैकशः = एक-एक करके। शतत्रय = तीन सौ। विच्छेदिष्यमाणवृक्षानालिङ्ग्भिः = काटे जाते हुए वृक्षों का आलिंगन करते हुए। वपुः = शरीर। छेद्यम् = काटना चाहिए। जल्पभिः = कहते हुए। विश्रुतं = प्रसिद्ध है।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में विश्नोई जाति के स्त्री-पुरुषों का वृक्षों की रक्षा के लिए आत्मोत्सर्ग किये जाने का वर्णन किया गया है।

अनुवाद हमारे देश में 'सलीम अली' नाम का महान् पक्षी-निरीक्षक हुआ है, जिसने पक्षियों के विज्ञान के विषय में बहुत-सी पुस्तकें लिखी हैं। हरियाणा प्रदेश और राजस्थान में रहने वाले 'विश्नोई सम्प्रदाय के पुरुष वनों और पक्षियों की रक्षा करने में अपने प्राणों को भी तृण के समान (तुच्छ) समझते हैं। वे हरे वृक्षों को नहीं काटते, न ही दूसरों के द्वारा काटना सह सकते हैं। जंगली पशुओं का शिकार भी उनकी बस्तियों में बिल्कुल निषिद्ध है। जोधपुर के राजा की; महल बनाने हेतु लकड़ी के लिए केजरी वृक्षों के काटने की; आज्ञा के विरुद्ध एक-एक करके तीन सौ 'विश्नोई जाति के स्त्री-पुरुषों ने काटे जाने वाले वृक्षों का आलिंगन करते हुए पहले हमारा शरीर काटो, बाद में वृक्ष काटना' ऐसा कहते हुए अपने प्राण दे दिये थे। ऐसा जगत् । प्रसिद्ध है और नामांकित हुआ वहाँ (घटनास्थल पर) अंकित है।

(7)
नास्त्येषोऽस्माकमभिप्रायो यद्वनेभ्यः प्राप्यो लाभो ग्राह्य एव न। स तु अवश्यं ग्राह्यः यथा मधुमक्षिका पुष्पाणां हानि विनैव मधु नयति तथैव भवननिर्माणाय अन्यकारणाद् वा काष्ठं काम्यत एव, किन्तु पुरातना एव वृक्षा योजना निर्माय कर्तनीया, न नूतनाः। यावन्तः कर्त्तनीयास्तद्विगुणाश्च पूर्वत एव आरोपणीयाः। गृहाणां प्राङ्गणेषु, केदाराणां सीमसु, पर्वतानामुपत्यकासु, मार्गानुभयतः क्रीडाक्षेत्राणि परितश्च यत्रापि यावदपि स्थलं विन्दते तत्र यथानुकूल्यं विविधा वृक्षा रोपणीयाः। प्रत्येकं देशवासिनैवमेव विधेयं, प्रत्येक जन्म मृत्युर्विवाहश्च वृक्षारोपणेनानुसृतः स्यात्। यद्येवं सोत्साहं योजनाबद्धं च कार्यं भवेत् आरोपितानां वृक्षाणां च निरन्तरपोषणमुपचर्येत तर्हि वर्षदशकेनैव निकामं क्षतिपूर्तिर्भवेत्। किं बहुना, वृक्षाणां पशुपक्षिणां चं रक्षणे विश्नोई सम्प्रदायस्यादर्शः सर्वैरपि पालनीयः। एवं च ब्रूमः

वनेन जीवनं रक्षेत् जीवनेन वनं पुनः।
मा वनानि नरश्छिन्देत् जीवनं निहितं वने ॥

शब्दार्थ मधुमक्षिका = शहद की मक्खी। काम्यत = चाहा जाता है। तद्विगुणाः = उससे दोगुने। आरोपणीयाः = लगाये जाने चाहिए। केदाराणां सीमसु = खेतों की सीमाओं पर। उपत्यकासु = निचली घाटियों में। मार्गानुभयतः = मार्गों के दोनों ओर परितः = चारों ओर। देशवासिनैवमेव (देशवासिना + एवं + एव) = देशवासियों के द्वारा इसी प्रकार। विधेयम् = करना चाहिए। अनुसृतः = अनुसरण किया हुआ। पोषणमुपचर्येत = पोषण किया जाए। निकामम् = पर्याप्त। सम्प्रदायस्यादर्शः = सम्प्रदाय का आदर्श। बूमः = कहते हैं। जीवनेन = : जीवन के द्वारा। मा = नहीं। नरश्छिन्देत् = मनुष्य को काटना चाहिए। निहितं = सुरक्षित है।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में वनों से प्राप्त होने वाले लाभों को प्राप्त करने व पुराने वृक्षों के काटने से पूर्व नये वृक्ष लगाने के लिए उपदेश दिया गया है।

अनुवाद हमारा यह अभिप्राय नहीं है कि वनों से प्राप्त करने योग्य लाभ को ग्रहण ही नहीं करना चाहिए। उसे तो अवश्य ग्रहण करना चाहिए। जैसे मधुमक्खी पुष्पों की हानि के बिना ही पराग ले जाती है, उसी प्रकार भवन-निर्माण के लिए अथवा अन्य कारणों के लिए लकड़ी तो चाहिए ही, किन्तु योजना बनाकर पुराने वृक्षों को ही काटना

चाहिए, नये नहीं। जितने काटे जाने हों, उससे दुगुने पहले से ही लगाये जाने चाहिए। घरों के आँगनों में, खेतों की सीमाओं पर, पर्वतों की तलहटियों में, मार्गों के दोनों ओर तथा खेल के मैदानों के चारों ओर जहाँ भी जितना भी स्थान मिलता है, वहाँ अनुकूलता के अनुसार अनेक प्रकार के वृक्ष लगाये जाने चाहिए। प्रत्येक देशवासी को ऐसा ही करना चाहिए। प्रत्येक जन्म, मृत्यु और विवाह वृक्षों के लगाने के साथ ही हों। यदि इस प्रकार उत्साहसहित योजना बनाकर कार्य किया जाये और लगाये गये वृक्षों का निरन्तर पोषण किया जाये तो दस वर्ष में ही अत्यधिक क्षतिपूर्ति हो सकती है। अधिक क्या कहें, वृक्षों और पशु-पक्षियों की रक्षा करने में विश्नोई सम्प्रदाय के आदर्श का सबको पालन करना चाहिए। हम इस प्रकार कहते हैंवन से जीवन की रक्षा करनी चाहिए और जीवन से वन की रक्षा करनी चाहिए। मनुष्य को वनों को नहीं काटना चाहिए। वन में जीवन निहित है।

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1.
वन और मनुष्य में अन्योन्याश्रय सम्बन्ध के विषय में लिखिए।
या
वनों का महत्त्व समझाइए। **[2006,07,08, 10, 12, 14]**
या
वृक्षों के महत्त्व पर आलेख लिखिए। **[2012]**
उत्तर :
हमारे केवल भौतिक विकास में ही नहीं, प्रत्युत् सांस्कृतिक विकास में भी वनों का बहुत बड़ा योगदान है। आरण्यक, उपनिषद् आदि अध्यात्म विद्या का विवेचन करने वाले ग्रन्थ वनों में ही रचे गये। वनों में स्थित तपोवन में ही दस लक्षणों वाला मानव धर्म, पुरुषार्थ चतुष्टयों से युक्त जीवन का उद्देश्य प्रकट हुआ। यह इतिहास अच्छी तरह प्रमाणित करता है। प्राचीन विद्वानों ने वन के बिना जीवन की कल्पना ही नहीं की। संस्कृत कवियों की वन-देवता की कल्पना करना और वानप्रस्थ आश्रम में वन में रहने का नियम इसी बात की ओर संकेत करता है। प्रत्यक्ष रूप से वन मनुष्य जाति को जितना देते हैं, परोक्ष अर्थात् अप्रत्यक्ष रूप से उससे भी अधिक देते हैं। इसी कारण से प्राचीन लोग वृक्षों को अपने पुत्र के समान पालन करते थे और वन के प्राणियों की रक्षा करते थे। इनके साथ उनका अटूट और अन्योन्याश्रय सम्बन्ध उचित ही था।

प्रश्न 2.
वनों से हमें किस प्रकार लाभ ग्रहण करना चाहिए?
उत्तर :
वनों से प्राप्त होने वाले लाभों को हमें उसी प्रकार ग्रहण करना चाहिए जिस प्रकार मधुमक्खी फूलों को हानि पहुँचाए बिना उससे पराग ले जाती है। भवन निर्माण अथवा अन्य प्रयोजनों हेतु लकड़ी की आवश्यकता पड़ने पर पुराने वृक्षों को ही योजनाबद्ध रूप से काटना चाहिए, नये वृक्षों को नहीं और जितने वृक्ष काटे जाने हों उनसे दुगुने वृक्ष पहले ही लगाये जाने चाहिए।

प्रश्न 3.
'वन में जीवन निहित है', अतः इस जीवन को बचाये रखने के लिए हमें क्या करना चाहिए?
उत्तर :
'वन में जीवन निहित है, अत: इस जीवन को बचाये रखने के लिए हमें नये वृक्षों को नहीं काटना चाहिए और पुराने वृक्षों को भी योजनाबद्ध रूप से काटना चाहिए। जितने वृक्ष काटे जाने हों उससे पहले उनसे दुगुने वृक्षों को लगाया जाना चाहिए। घरों के आँगनों में, खेतों की सीमाओं पर, पर्वतों की तलहटियों में, मार्गों के दोनों ओर, खेल के

https://www.evidyarthi.in/

मैदानों के चारों ओर तथा जहाँ भी जितना भी स्थान मिलता हो वहाँ अनुकूलता के अनुसार अनेक प्रकार के वृक्ष लगाये जाने चाहिए। प्रत्येक देशवासी को प्रत्येक जन्म, मृत्यु, विवाह आदि अवसरों पर निश्चित ही वृक्षारोपण करना चाहिए।

प्रश्न 4.
वन में पाये जाने वाले पशु-पक्षियों से हमें क्या लाभ हैं?'जीवनं निहितं वने' पाठ
के आधार पर बताइए।
उत्तर :
वनों के समान वन्य जन्तु और पशु-पक्षी भी हमें अनेक लाभ पहुँचाते हैं। ये प्राकृतिक सन्तुलन बनाये रखने में सहायक होते हैं। पक्षी खेती को नुकसान पहुँचाने वाले दीमक आदि कीड़ों को खा जाते हैं। सिंह आदि हिंसक पशु अन्य पशुओं को मारकर उनकी अनियन्त्रित वृद्धि को रोकते हैं। पशु-पक्षी हमारे मनोरंजन में तो सहायक होते ही हैं, उनके जीवन से हमें बहुत कुछ सीखने को भी मिलता है। अतः हमें इनके मांस, चर्म, दाँत, पंख आदि के लोभ में इनका संहार नहीं करना चाहिए।

प्रश्न 5.
आज हमारे देश में वनों का प्रतिशत क्या है? **[2006, 11, 14]**
उत्तर :
आज हमारे देश के 11% भाग पर ही वन विद्यमान हैं।

प्रश्न 6.
पर्यावरण की सुरक्षा पर पाँच/तीन वाक्य लिखिए। **[2011, 12, 13]**
उत्तर :
पर्यावरण की सुरक्षा पर पाँच वाक्य निम्नलिखित हैं

- योजना बनाकर ही पुराने वृक्षों को काटना चाहिए। नये वृक्षों को कभी नहीं काटना चाहिए।
- जितने भी वृक्ष काटे जाने हों, उससे दो-गुने वृक्ष पहले ही लगा लिये जाने चाहिए।
- घर के आँगन में, खेतों की सीमाओं पर, पर्वतों की तलहटियों में, मार्गों के दोनों ओर, खेल के मैदानों के चारों ओर; अर्थात् जहाँ भी स्थान मिले; वृक्ष लगाये जाने चाहिए।
- प्रत्येक व्यक्ति को अपने घर में होने वाले प्रत्येक कार्यक्रमों; यथा-जन्म, मृत्यु, विवाह आदि; का प्रारम्भ वृक्षों के लगाने के साथ ही करना चाहिए।
- वृक्षों को लगाने के साथ-साथ उनकी निरन्तर देखभाल और पोषण भी करना चाहिए।

प्रश्न 7.
वन-संरक्षण और वृक्षारोपण से क्या-क्या लाभ हैं?
उत्तर :
वृक्षों से हमें केवल फल, फूल, ईंधन के लिए व मकान बनाने के लिए लकड़ियाँ ही प्राप्त नहीं होती हैं वरन् ओषधियों के योग्य नाना प्रकार की छालें, जड़े, पत्ते आदि वस्तुएँ भी प्राप्त होती हैं। नाना प्रकार के औद्योगिक उत्पादन के योग्य लाखे, तेल और द्रव पदार्थ भी प्राप्त होते हैं। शहद भी वृक्षों-वनस्पतियों से ही प्राप्त होता है। कागज और धागे के उत्पादन में भी वृक्षों की लकड़ी कच्चे माल का काम करती है। सन्दूक, रस्सी, चटाइयाँ आदि विभिन्न सामान वृक्षों और वनस्पतियों से ही बनते हैं। वायु की शुद्धता, भूमि के कटाव को रोकना, मेघों की सहायता करना आदि भी वृक्षों के द्वारा ही सम्भव है। इसलिए हमें वन-संरक्षण और वृक्षारोपण करना चाहिए।

प्रश्न 8.

'अरण्य-रोदन न्याय' का आशय स्पष्ट कीजिए। **[2005]**

उत्तर :

वन निर्जन प्रदेश होते हैं। अत: यदि विपत्ति आने पर कोई व्यक्ति वहाँ बैठकर रोने लगे कि मेरे रुदन को सुनकर कोई मेरी सहायता के लिए आएगा, तो उसका रोना व्यर्थ होता है, क्योकि वहाँ उसके रोने को सुनने वाला कोई नहीं होता। इसी प्रकार जब व्यावहारिक जीवन में किसी की बात को सुनने वाला कोई नहीं होता, तब उसके व्यर्थ प्रयत्न को 'अरण्य-रोदन न्याय' की संज्ञा दी जाती है।

https://www.evidyarthi.in/